ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

हिन्दी उपन्यासों में वर्णित उत्तराखंड प्रदेश के लोकगीत

ज़ेनब खान

पी.एच .डी, शोधार्थी (हिंदी)
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी,
गच्चीबौली, हैदराबाद - 500032

'लोकगीत' शब्द दो शब्दों के योग से निर्मित हुआ, 'लोक' और 'गीत', जिसका अर्थ है, लोक के गीत । अत: "लोकगीत का शाब्दिक अर्थ है जन-मानस का गीत, जन-जन का गीत, जन-मानस की आत्मा में रचा-बसा गीत, अर्थात जो गीत संपत्ति की तरह विरासत में मिले हों, वही लोकगीत हैं ।"[1] लोकभाषा अथवा बोली में हृदय के वह सुखात्मक-दुखात्मक उद्गार जो गीत के रूप में अनायास मुँह से निकले और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक विरासत के रूप में पहुँचे वह लोकगीत हैं । इन लोक गीतों में रहन-सहन, ब्याह-शादी, नाते-रिश्तेदारी, नौक-झोंक, पर्व, प्रकृति का मनोरम दृश्यों आदि गूंजते हैं । इन लोक गीतों में किसी भी प्रकार की बनावट नहीं, न अलंकारों आदि का प्रयोग, यह रस माधुर्य और आनन्द की अनुभूति से ओत-प्रोत होते हैं । मराठी लेखक डॉ. सदाशिव फड़के ने लोकगीतों की सहजता को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है – "शास्त्रीय नियमों की परवाह न करके सामान्य लोक व्यवहार के उपयोग में लाने के लिए मानव अपनी

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

आनन्द तरंग में जो छन्दोबद्ध वाणी सहज उद्‌भूत करता है, वही लोकगीत हैं ।"[2] अत: लोकगीतों की यह सहजता और सरलता उसे ग्राह्य बनाती है । काव्यात्मक गुणों के अभाव में भी इनका अपना एक अलग नैसर्गिक सौन्दर्य होता है ।

लोकगीतों में उसके रचयिता का लोप रहता है, इसी संदर्भ में लोकगीतों के आचार्य डॉ. फ्रांसिस चाइल्ड का मत है – "लोकगीत में उसके रचयिता के व्यक्तित्व का सर्वथा अभाव रहता है । उसकी वाणी में तो रचना अवश्य मिलती है परन्तु उसका व्यक्तित्व बिल्कुल नहीं मिलता है । लोकगीतों का रचयिता इन गीतों की सृष्टि कर जनता के हाथों इन्हें समर्पित कर स्वयं अंतर्धान हो जाता है ।"[3] लोकगीत किसी व्यक्ति विशेष के अधिकार में नहीं रहते अपितु यह समूचे जन की सम्पदा होती है, जिन्हें लोग अपनी वाणी में सुरक्षित रखते हैं ।

उत्तराखंड प्रदेश के लोकगीत इस पर्वतीय क्षेत्र की भांति ही अपने भीतर विविधता और विशिष्टता को समाहित किए हुए हैं । लोकगीतों की स्वर लहरियाँ, धुनें, बोल इन पर्वतों में गूंज कर इनके सौन्दर्य में चार-चाँद लगाती हैं । डॉ. नारायण दत्त पालीवाल ने लोकगीतों के संदर्भ में अपने शोध ग्रन्थ में लिखा है:- "मनुष्य का स्वभाव है कि वह अपने चारों ओर की

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

प्रकृति के सौन्दर्य में डूब जाता हैं। उल्लास के उन क्षणों में उसने जो उद्गार प्रकट किए, वही संगीतमय हो गए। मनुष्य की आरम्भिक अवस्था की इस संगीतमय अभिव्यक्ति ने ही लोकगीत का रूप ले लिया। अत: यह कहा जा सकता है कि पहली अवस्था में जो अभिव्यक्ति लय के रूप में थी, उसे धीरे-धीरे अर्थ मिलने लगा और बाद में अर्थ के अनुसार लय में भी परिवर्तन होने लगा। इसकी अंतिम अवस्था समयानुकूल विषयों की अभिव्यक्ति के रूप में लोकगीत मानी जा सकती है।"[4] विषयों के आधार पर इन लोकगीतों में विविधता पाई जाती है, जैसे संस्कार के गीत, ऋतु गीत, कृषि के गीत, मेले, पर्व व त्योहारों के गीत, ऐतिहासिक गीत आदि।

उत्तराखंड में संस्कार गीतों का भी विशिष्ट महत्व है। "विभिन्न संस्कारों के अवसर पर उत्तराखंड में संस्कार गीत गाए जाने की परंपरा है। इन्हें 'फाग', 'मांगल', या 'शगुन', गीत कहते हैं। इनमें 'शकुनाखर', 'न्यूतण', 'गणेश पूजा', 'शिशु जन्म', 'छटी', 'नामकरण', 'यज्ञोपवीत', और 'विवाह' आदि के गीत प्रमुख हैं।"[5] सभी संस्कारों के प्रारंभ में अक्सर 'शकुनाखर' गीत गाए जाते हैं, जिन्हें रमेशचंद्र शाह ने 'गोबरगणेश' उपन्यास में विनायक के जन्मदिवस की सालगिरह के अवसर पर गिदारियों के द्वारा गाते हुए दर्शाया है – "'शकूना दे शकूना दे, काज ये

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

अती नीको सो, रंगीलों पाटलों आँचली कमलों को फूल....." इन गीतों को गाने वाली औरतों को गिदारियाँ कहा जाता हैं । इस क्षेत्र में विवाह के अवसर पर एक ऐसा अनुष्ठान किया जाता है जिसके अंतर्गत पिता वधू का अंगूठा वर को पकड़ाता है और इस अनुष्ठान के सम्पन्न होने तक स्त्रियाँ काजगीत गाती हैं, इसी अनुष्ठान से सम्बंधित लोकगीत को मनोहर श्याम जोशी ने अपने उपन्यास 'कसप' में दर्शाया है – "हम नहीं कम्पै बिटिया हमारी, ये तो कम्पै है कूस की डारी रे ।"[6] यह विवाह के अवसर पर गाया जाने वाला लोकगीत है, इसे काजगीत भी कहा जाता है, और यह अकसर महिलाओं द्वारा गया जाता है ।

"त्योहार और उत्सव लोकाभिव्यक्ति के रंगस्थल होते हैं । इनमें विविध प्रकार के गीतों और नृत्यगीतों के माध्यम से लोकगायक अपने भाव और विचारों को अभिव्यक्त करते हैं ।"[7] मकर संक्रांति पर उत्तराखंड में 'घुघुतिया' नामक त्योहार मनाए जाने की प्रथा है । आटे से भिन्न-भिन्न आकृति के बनाए गए व्यंजनों को एक धागे में पिरोकर माला तैयार की जाती है, बच्चे उन्हें पहनकर उसमें से व्यंजन कौआ को खिलाते हैं, और काले कव्वा के गीत गा-गाकर मनौतियाँ माँगते हैं । मनोहर श्याम जोशी ने 'कसप' उपन्यास में इस घुघुतिया गीतों को अभिव्यक्त किया है :- "ले कव्वा

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

फूलों, बैणी कै दे भलो भल धुलौं (ले कव्वा फूल, बहिना को दे अच्छा-अच्छा दूल्हा)"[8] इन गीतों में व्यक्ति मन की अतृप्त इच्छाओं का भी बोध होता है । इसी प्रकार से होली के अवसर पर चंदा मांगते समय भी बच्चे गीत गाते हुए चंदा इकठ्ठा करते हैं । 'गोबरगणेश' उपन्यास में इन गीतों को दर्शाया गया है :- "ऐ नथवाली, लकड़ी दे दे । लकड़ी नहीं है तो पैसा दे दे । पैसा नहीं है तो पूरी पका दे....।"[9] इसी प्रकार वैशाख माह में भाई-बहन के प्रेम को दर्शाने वाला 'भिटौली' त्योहार पर गाए जाने वाले लोकगीत का सुन्दर चित्रण रमेशचंद्र शाह ने 'गोबरगणेश' उपन्यास में किया है । उदाहरण :-

"फुली गेछ दैणा....नरैणा

ऐगे रितू रैणा....

कफुवा बासण लागो, ओ मेरी बैणा

ऐगे रितू रैणा...(खेतों में सरसों फूल आई । वनों में कफुवा पक्षी की पुकार भी गूँजने लगी । तेरा भाई तुझे लिवाने आया है....ओ मेरी बहन !- भिटौली की ऋतु आ गई ।)"[10] यह लोकगीत इस क्षेत्र की संस्कृति को विशिष्टता प्रदान करते हैं ।

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

पलायन के परिणामस्वररूप उपजे गीत विरह गीत के अंतर्गत आते हैं । अक्सर इस प्रदेश का पुरुष वर्ग रोज़ी-रोटी की जुगत में परदेस चला जाता है, और पीछे छूट जाता है उनका परिवार । अपने पति की याद में इस प्रदेश की औरतें अक्सर विरह के गीत गुनगुनाती हैं । शैलेश मटियानी ने अपने उपन्यास 'चौथी मुट्ठी' में इन्ही विरह के गीतों को दर्शाया है :- "निर्मोही रे, जब तू जा रहा था, इस सिलेंगचौर की घाटी में घास नहीं अंकुराई थी, बाँज-फल्याँट के वृक्षों में पाल्यों नहीं फूटी थी।.....और अब ? तू तो लौटा नहीं रे कसाई, मगर तेरी आँखों की दीठ कहीं यहाँ पहुँचती तो देखती, रे सुवरन! कि, सिलेंगचौर घाटी की हरी-कौंली घास घुटनों तक उठ आई है और वृक्षों की पाल्यों की मुलायम गुच्छियाँ मेरे सिर की बिखरी हुई लटी की तरह झूलने लग गई हैं ।"[11] इन गीतों में पर्वतीय स्त्रियों की विरह-वेदना की अभिव्यक्ति हुई है । वह अपने गीतों के माध्यम से विरह की लम्बी अवधि को व्यक्त करते हुए अपने पति को उलाहने भी दे रही हैं ।

उत्तराखंड का मुख्य व्यवसाय कृषि है, यहाँ अधिकांश लोग वनाधारित कार्यों व पशुपालन जैसे कार्य करते हैं, कृषि कार्य निराई, गुडाई, कटाई, बुआई आदि कार्य करते समय गीत भी गाए जाते हैं । अक्सर ये गीत श्रम के भार को कम करने हेतु गाए जाते हैं । श्रम से

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

सम्बंधित गीत को क्षितिज शर्मा के उपन्यास 'उकाव' में देखा जा सकता हैं । उदाहरण :- "काम पर जब उसके हाथ थकने लगते हैं, हथौड़े की ठक-ठक पर गीत मिलाने लगता हैं । किसी भी बात को गाते-गाते गीत बना देता हैं ।.....एक बार मिलाकर गा दिया उसने तो फिर हुडके की ताल पर दूर-दूर तक चली जाएगी उसकी चर्चा ।"[12] हृदय के यह उद्गार गीत का रूप धारण कर लेते हैं और जन-जन तक अपनी पहुँच बना लेते हैं । खेत तैयार करने, बीज बोने, निराई, कटाई आदि कृषि कार्यों से संबंधित अनेक लोक गीतों की परंपरा इस क्षेत्र में रही हैं । मुख्य गायक जिसे 'हुड्किया' कहा जाता है, वह गाना आरंभ करता है और साथ में काम करने वाले गीत की अंतिम पंक्ति को दुहराते चलते हैं । गुड़ाई करते समय के गीत के बोल कुछ इस प्रकार हैं :-

"खेतों में खोल दी गई पानी की गूल ।

किस देव को चढ़ेगा मासी का यह फूल ।

भूमियादेव को चढ़ेगा यह फूल ।

धरती माँ को चढ़ेगा यह फूल ।"[13] इस प्रकार जहाँ यह लोकगीत श्रम भार को कम कर मानसिक व शारीरिक रूप से शक्ति

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

प्रदान करते हैं, वहीं दूसरी और यह गीत उत्तराखंड की संस्कृति के वाहक बन इसमें विशिष्टता उत्पन्न करते हैं।

ऐतिहासिक गीतों के गायन का प्रचलन भी इस प्रदेश में देखने को मिलता है। इन गीतों में वह अपने प्रदेश के गौरवमय इतिहास की गाथा का बखान करते हैं। कोई एक व्यक्ति इन गीतों को गाता है, और सभी लोग आस-पास ध्यान पूर्वक इनमें वर्णित गाथा को सुनते हैं। गंगाप्रसाद विमल ने 'मानुषखोर' उपन्यास में इन ऐतिहासिक गीतों की अभिव्यंजना की है। उदाहरण :-

"जब रुद्रावतार हुआ था

मैं गण था।

जब मयनावतार हुआ था

तब मैं दास था।

जन्म-जन्मान्तरों से

यही था मैं यही और

तब भी गा रहा था..."[14] इस प्रदेश में अपने अस्तित्व के इतिहास को इस गीत के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है।

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

कुछ घटनाएँ इतनी महत्वपूर्ण होती है कि वह ऐतिहासिक बन जाती हैं, लेकिन कुछ साधारण घटनाएँ भी होती हैं। ऐसा नहीं है कि साधारण होने के कारण इनकी उपेक्षा की जाये, अपितु यह भी लोक में महत्व रखती हैं और लोक गीतों में अनुस्यूत हो जाती हैं।

प्रकृति की सुरम्य वादियों में बसे इस प्रदेश में प्रकृति चारों और अपना सौन्दर्य बिखेरती है । यहाँ के ऊँचे-ऊँचे पर्वत, कल-कल बहती नदियाँ, हरे-भरे वृक्ष, फल-फूल, पक्षियों का मधुर कलरव, नीला खुला अनंत आकाश, साफ़ व हल्की ठंडी बयार किसी को भी अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। प्रकृति के इस मनोरम व मनहर दृश्य को सांध्यगीत के माध्यम से पंकज बिष्ट नें इस क्षेत्र की स्थानीय बोली में अपने उपन्यास 'उस चिड़िया के नाम' में इस प्रकार अभिव्यक्त किया है। उदाहरण :-

"ए संज्या झुकी गेछ भगवाना, नील कंठा हिंवाला।

ए संज्या झुकी गेछ हो रामा, अगास रे पताला।

ए संज्या झुकी गेछ हो भगवाना, नौ खंडा धरती माँझा।

नौ खंडा धरती हो रामा, तीना हो रे लोका।

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

के संज्या झुकी गेछ हो रामा, यो रंगीलों बैराटा ।

के संज्या झुकी गेछ हो भगवाना, पंचचुली का धुरा..... "[15] (अर्थात संध्या के समय सूर्य देवता चले गए हैं, नीलकंठ हिमालय में, सूर्य देवता चले गए हैं, आसमान से पाताल में, सूर्य देवता चले गए हैं, नौ खण्ड और तीनों लोको में । कि सूर्य देव चले गए हैं, रंगीले बैराट (एक स्थान का नाम) में । कि सूर्य देव चले गए हैं हिमालय की चोटी में ।) इस गीत में संध्या के प्राकृतिक सौन्दर्य को व्यक्त किया गया है ।

बालगीतों की परम्परा भी इस क्षेत्र में पायी जाती है, यह दो प्रकार के होतें हैं, एक वह गीत जो बच्चे खेलते समय, स्कूल जाते समय अपने मनोरंजन के लिए गीतों का निर्माण कर लेते हैं और दूसरा वह, जो माँ, दादी-नानी के द्वारा बच्चों को खिलाने, सुलाने, उनकी नज़र उतारने या कभी-कभी अपने बच्चों पर मोहित हुई माँ का वात्सल्य भाव अचानक उमड़ पड़ता है तब ऐसे अवसरों पर बाल-गीतों की सृष्टि स्वत: ही हो जाती है । अपने बच्चों पर लोकगीतों के माध्यम से ममत्व उड़ेलती एक माँ के वात्सल्य भाव को गंगाप्रसाद विमल ने अपने उपन्यास 'मानुषखोर' में कुछ इस प्रकार वर्णित किया है :- "तभी धनकरमा की दो जेठी बेटियाँ छोटी बच्चियों

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

को गोद में लिए आ गई ।.....हाथों की दो छोटी-छोटी मुट्ठियों में दो पुष्प थे और अचानक ही जैसे वह वाणी में फट पड़ी हो । न जाने किस राग, किस छन्द का एक गीत बिना वाद्य संगीत के वह गाने लगी –

आछारियों की नज़र न पड़े तुम पर

हे मेरे पोस्त के फूलों

तुम ऐसे ही जगमगाते रहना ।

मैं तो तुम्हे हिमालय के शिव के हाथों देती हूँ

तुम्हे पार्वती को सौंपती हूँ

ओ मेरे पोस्त के फूलों

तुम पर आछरियों की नज़र न पड़े..."[16] अपनी बच्चियों को नज़र, टोक से बचे रहने की कामना को इस गीत के माध्यम से ओमवती ने व्यक्त किया । इन गीतों में माँ का ममत्व स्वत: ही अभिव्यक्त हो जाता है । यह गीत किसी भी शास्त्रीय नियम में न बंधकर, हृदय की अन्तस गहराईयों की अभियक्ति का साधन बन जाते हैं ।

लोकगीत लोक की सहज अनुभूति को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम है । उत्तराखंड के लोकगीतों में इस क्षेत्र का सामाजिक जीवन

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

पिरोया गया है। यहाँ पर्वत से लेकर नदी, घाटी से लेकर मैदान, जन्म से लेकर मरण, विवाह, वियोग, मिलन, पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों, व्यक्तियों, चर-अचर आदि सभी पर लोकगीत रचे गए हैं। कोई घटना घटी नहीं की उस पर ही गीत रच दिया गया और यह गीत फिर एक से दूसरे तक पहुँच कर विरासत के रूप में सुरक्षित कर लिया गया। यह गीत केवल मनोरंजन के साधन ही नहीं अपितु हमारे ज्ञान में भी वृद्धि करते हैं। इन गीतों के माध्यम से हम इस क्षेत्र की संस्कृति, रीति-रिवाजों, पर्व-त्योहारों, अनुष्ठानों आदि को भली-भांति व निकटता से जान सकते हैं। अत: इन लोकगीतों में इस प्रदेश की संस्कृति सदैव अमर रहेगी।

सन्दर्भ सूची

Copyright © 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-7 No. 3 July 2020

[1]2008, गौतम, डॉ.सुरेश, "लोक साहित्य : अर्थ और व्याप्ति", पृ स – 67, संजय प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली

[2] वही , पृ स – 67

[3] वही, पृ स – 67

[4]2010,भट्ट, डॉ.पुष्पलता,"कुमाऊंनी लोक साहित्य : संस्कृति, भाषा एवं साहित्य", पृ.स.- 119, संजय प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली

[5]2009, पोखरिया, देवसिंह, उत्तराखंड : लोक संस्कृति और साहित्य", पृ.स.- 222, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

[6]2010, जोशी, मनोहर श्याम, "कसप", पृ.स.- 30, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली

[7]2009, पोखरिया, देवसिंह, उत्तराखंड : लोक संस्कृति और साहित्य", पृ.स.- 235, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

[8]2010, जोशी, मनोहर श्याम, "कसप", पृ.स.- 148, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली

[9]2016, शाह, रमेशचन्द्र, "गोबरगणेश", पृ.स.- 88, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली

[10]वही, पृ.स.- 84

[11]1962, मटियानी, शैलेश, "चौथी मुट्ठी", पृ.स.- 79-80, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-6

[12]2010, शर्मा, क्षितिज, "उकाव", पृ.स.- 66-67, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली

[13]2009, पोखरिया, देवसिंह, उत्तराखंड : लोक संस्कृति और साहित्य", पृ.स.- 233-234, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

[14]2014, विमल, गंगाप्रसाद, "मानुषखोर", पृ.स.- 276, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली

[15]1992, बिष्ट, पंकज, "उस चिड़िया का नाम", पृ.स.- 104, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि,

[16]2014, विमल, गंगाप्रसाद , "मानुषखोर", पृ.स.- 233, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली

Copyright © 2020 Authors